कबीर के समन्वयवाद पर वेद का प्रभाव

डॉ. एम. डी. थॉमस

भूमिका : कबीर से मेरा नाता

कबीर से मेरा नाता विद्यालयीन दिनों से रहा। मातृभाषा मलयालम् से अधिक राष्ट्रभाषा हिंदी से मेरा लगाव था और उससे भी अधिक कबीर के दोहों से बहुत प्रभावित हुआ करता था। आगे चलकर महाविद्यालयीन और विश्वविद्यालयीन अध्ययनों के बाद जब शोध करने का समय आया, कबीर को ही अनुशीलन का केंद्र बनाना सहज और सुखद था। विश्व स्तर पर प्रतिष्ठित ईसाई दर्शन से तुलनात्मक अनुशीलन वी प्रक्रिया में कबीर ने मुझे एक 'पुनर्जन्म' ही दे डाला। ईसा की प्रेरणा से समाज सेवा के लिए आजीवन समर्पित मुझे कबीर के समन्वय दर्शन ने सर्व धर्म भाव, सांप्रदायिक सद्भाव, राष्ट्रीय समरसता और सामाजिक समन्वय की दिशा प्रदान की।'सद्गुरु की महिमा अनंत, अनंत किया उपगार। लोचन अनंत उगाड़िया, अनंत दिखावणहार'।।

सार

शास्त्रीय धरातल पर प्रतिष्ठित वेद के सम्यक और संतुलित ज्ञान को लोक-व्यवहार के पटल पर स्थापित करने की कला में कबीर अद्वितीय रहे और इस क्षेत्र में उनका योगदान अपतिम रहा है। बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी कबीर के दर्शन में समन्वयवाद मुख्य है, जो कि जीवन की व्यावहारिकता का जीवंत प्रतीक है। किसी एक विचारधारा के चंगुल में फँसना और कोरे सिद्धांत के आसमान में उड़ान भरना कबीर को मंजूर नहीं था। बल्कि, कबीर की जीवन दृष्टि शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व तथा सामाजिक समन्वय की भावना से ओतप्रोत समाज का गठन करने की दिशा में प्रवृत्त थी।

विचार, आचार, भाव, भक्ति, ज्ञान, सगुण, निर्गुण, आदि के बीच समन्वय स्थापित कर कबीर ने अपनी जीवन-साधना की समग्रता और अनूठेपन का परिचय दिया। आपस में लड़नेवाले हिंदू-मुसलमानों के बीच ही नहीं, अंतर्विरोधों में फँसे हिंदू परंपराओं में तालमेल बिठाने में भी कबीर ने अपनी बुलंद ज्ञान-चेतना से उभरी प्रभावशाली उक्तियों और उलटबाँसियों का प्रयोग बड़े सफल रूप से किया। साफ है, कबीर के समन्वयवादी व्यक्तित्व में विद्यमान दार्शनिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक चेतना में वेद के सम्यक और संतुलित ज्ञान का प्रभाव सहज रूप से प्रतिफलित होता है।

साथ ही, सामाजिक उथल-पुथल से शिथिल हुए अपने समाज को सुधारने और उसमें मानवता का प्राण फूँकने के लिए कबीर ने वेद के अद्वैत दर्शन से 'परम तत्व' को साधन बनाया। उसी सच की साधना को अपने जीवन का केंद्र बनाकर उन्होंने समाज के मानवीय और आध्यात्मिक उन्नयन को अपनी साधना का लक्ष्य बनाया। भक्ति के नाम पर धर्म के क्षेत्र में फैले हुए खोखले आडम्बरों, अंध-विश्वासों, रूढ़ियों, प्रथाओं और परम्पराओं के साथ-साथ समाज के विभाजनकारी तत्वों पर कटु प्रहार करना उनके लक्ष्य की प्राप्ति का माध्यम था।

सांप्रदायिकों, धर्मांधों और कट्टरपंथियों में कूट-कूट कर भरी हुई अधार्मिकता और भ्रष्टता को उज़ागर कर और खुद को 'ना हिंदू, ना मुसलमान' बताकर कबीर निराकार परम तत्व की एकात्मक निष्ठा में लीन हुए। सर्वव्यापी होने से सहजता से उपलब्ध परम सत्ता को धर्म के पाखंडी चौकीदारों से मुक्त कर कबीर ने 'बहता पानी' के समान स्वच्छ सोच और सदाचरण की साधना में लागू किया

और सामाजिक जीवन में एकता और समरसता का मार्ग प्रशस्त किया। वेद में विद्यमान सम्यक ज्ञान की साधना के ज़रिये स्वयं में 'महात्मा' के गुणों को प्रतिबिंबित कर कबीर ने मानवीय जीवन का सबसे व्यावहारिक और जीवंत उदाहरण प्रस्तुत किया, जो कि सदैव महनीय और वंदनीय है।

कबीर स्वयं वेद का सार

'वेद' शब्द संस्कृत भाषा के 'विद्' धातु से बना है, जिसका अर्थ है 'ज्ञान'। वेद का अर्थ है 'ज्ञान का ग्रंथ'। इसी धातु से 'विदित' (जाना हुआ), 'विद्या' (ज्ञान), 'विद्वान' (ज्ञानी), आदि शब्द भी बने हैं। 'जानना' वेद की व्यावहारिक प्रक्रिया है और 'ज्ञान' वेद का सार और फल दोनो हैं। जहाँ तक कबीर का सवाल है, आपने 'कागद की देखी' को किनारे कर 'आँखिन देखी' पर विश्वास किया और 'अनभै साँचे' की साधना कर वेद में छिपे हुए 'ज्ञान' को अपने भीतर समाहित किया। इस प्रकार, कबीर स्वयं 'ज्ञान का महासागर' बन कर उभरे। स्पष्ट है, कबीर ने सामान्य अर्थ में भी वेद को, वह भी स्वयं में, व्यावहारिक बनाया।

कबीर का समन्वयात्मक व्यक्तित्व

कबीर का व्यक्तित्व बहुआयामी था। ज्ञानी, गुरु, संत, साधु, साधक, द्रष्टा, रहस्यदर्शी, कवि, दार्शनिक, समाज-सुधारक, समन्वयवादी, व्यवहारवादी, आदि विविध आयामों से समन्वित और संतुलित व्यक्तित्व के धनी होकर कबीर एक पूर्ण इन्सान थे। साहसी और सच के सख्त हिमायती के रूप में वे दार्शनिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक चेतना से युक्त रहे। भारतीय इतिहास में कबीर के व्यक्तित्व का कोई मुकाबला नहीं है। विविध धर्म-समुदायों, भाषा-समुदायों और देशों के शोधकर्ताओं ने कबीर का गहन अध्ययन कर कबीर से लाभान्वित हुए ही नहीं, कबीर को जगज़ाहिर ही कर दिया। यह इस लिए था कि कबीर का व्यक्तित्व ही अपने आप में समन्वयात्मक रहा और सबके लिए प्रेरणादायक रहा।

कबीर का समन्वयवादी दृष्टि

सामाजिक जीवन का कोई भी पहलू अलग-थलग रहे, यह कबीर को मंजूर नहीं था। उन्होंने उन पहलुओं में समन्वय स्थापित करने का भरपूर प्रयास किया। आपने विचार को भाव से ही नहीं, आचार के साथ भी जोड़ा। आपने ज्ञान और भक्ति, सिद्तांत और व्यवहार तथा दर्शन और प्रेम के बीच तालमेल पर भी ज़ोर दिया। साथ ही, कबीर की दृष्टि ने सगुण और निर्गुण, धर्म और समाज तथा हिंदू और मुसमलान को भी एक निगाह से देखा। इतना ही नहीं, आपने विविध विचारधाराओं के साथ-साथ अंतर्विरोधों के दरम्यान भी समन्वय स्थापित करने की दिशा में अपनी उक्तियाँ प्रस्तुत की। समन्वयवाद ही कबीर का अहम् दर्शन है।

कबीर की सम्यक दृष्टि में वेद

सम्यक दृष्टि 'समष्टि' की दृष्टि है और यही वेद का मुख्य चिंतन है। मानवता की समग्र प्रशस्ति इस दृष्टि का चरम लक्ष्य भी है। समष्टि में सभी व्यष्टियों को समाहित करने का भाव है। सभी धाराओं और समुदायों को एक साथ लेकर चलने में मानवता की चरम भलाई भी है। इसी समष्टि की दृष्टि और मानवता की कल्याण-भावना से प्रेरित होकर कबीर ने अपने समन्वयवाद की भित्ति को खड़ी की थी। ऐसी समन्वय-भावना के बल पर कबीर असल में पंडित बने, जिसकी असलियत और प्रक्रिया इस प्रकार है -- 'पोथी पढ़ि-पढ़ि जग मुआ, पंडित भया न कोय। ढ़ाई आखर प्रेम का पढ़े सो पंडित होय'।। ऐसी समग्र और सर्वग्राही चिंतन के परिणामस्वरूप कबीर सद्गुरु भी बने, जिनकी महिमा इस प्रकार है -- 'सद्गुरु की महिमा अनंत, अनंत किया उपगार। लोचन अनंत उगाड़िया, अनंत दिखावणहार'।।

समन्वय के लिए सुधार

इसी समन्वय-दृष्टि को आधार मानकर कबोर विचारधारा, धर्म, व्यवहार, आदि क्षेत्र में समाज में आमूल-चूल परिवर्तन लाने के लिए कटिबद्ध रहे। सीमाओं में सदैव बद्ध मानव जीवन में सुधार की बहुत संभावनाएँ हैं और बदलते रहना जीने का सबूत है, यही कबीर का अटल विश्वास था। सुधार, चाहे व्यक्ति, धर्म या समाज के किसी भी स्तर पर क्यों न हो, अपने आप में जोवन का उत्थान है। अंधविश्वास, रूढ़ियाँ, प्रथाएँ, परम्पराएँ, कर्मकाण्ड और आडंबर से ऊपर उठकर सबमें समानताएँ देखना और सबसे जुड़ना जीवन की असली साधना है। ऐसी समन्वय-भावना की साधना से ही जीवन का मानवीय और आध्यात्मिक उन्नयन संभव होगा। वेद के इस सार-भाव को अपने ही जीवन में पचाकर तत्कालीन समाज के परिवेश में सुधार लाने में लगे रहकर कबीर ने जिस ढंग से वेद को व्यवहार के धरातल पर लागू किया, वह सराहनीय है।

कबीर के 'परम तत्व' में एकता

कबीर ने 'परम तत्व जो एक है' की विवेचना विविध दृष्टिकोणों से किया। परमतत्व के स्वरूप पर चली आ रही विविध परंपराओं को समेटते हुए कबीर ने उसके निराकार-रूप को अपना आधार माना। उसे अनगिनत दिव्य गुणों से युक्त सगुण, गुणरहित निर्गुण, सगुण-निर्गुणोभय और सगुण-निर्गुणातीत की चार स्थितियों में दर्शाते हुए भी आपने परम तत्व की एकता पर ज़ोर दिया। वेद-वेदांत के तर्ज पर ही आपने परमतत्व को 'जो सूक्ष्म नहीं, जो स्थूल नहीं, जो दृश्य नहीं, जो अदृश्य नहीं, जो गुप्त नहीं, जो प्रकट नहीं, जिसका कोई ठिकाना नहीं', आदि कहकर परिभाषित भी किया। 'अकथ कहाणी प्रेम की, कछू कही न जाय। गूँगे केरी सरकरा, बैठे मुसुकाय'।। कहकर कबीर ने परम तत्व को साधक के 'परे' प्रतिष्ठित किया ही नहीं, 'कहत सुनत सुख उपजै।' और 'बोलन के सुख कारनै' कहकर उसकी एकता के साथ-साथ सार्वभौम उपादेयता को भी सिद्ध किया।

परम तत्व की व्यावहारिक साधना

व्यवहार की दृष्टि से देखा जाय तो 'निजी अनुभव में जितना ईश्वर है ठीक उतना ही ईश्वर निर्विवाद रूप से प्रामाणिक और विश्वसनीय रूप से सत्य है'। उसका पूर्ण ज्ञान किसी के वश में नहीं है, नहीं आ सकता। परमतत्व 'परम' तत्व होकर पूर्णता का प्रतीक है, जो कि सौ फीसदी है। साधक, चाहे वह किसी भी परंपरा के क्यों न हो, उस 'सौ फीसदी' की साधना करता है। परम तत्व के विषय में बने कुछ कोरे सिद्धांतों और परंपराओं को आँख मूँदकर मानकर ऊँच-नीच, बड़ा-छोटा और अपना-पराया का भाव रखना और आपस में लड़ते रहना कबीर के लिए व्यर्थता और मूर्खता है। अपनी सत्यान्वेषण-पद्धति में आत्मचिन्तन् और स्वानुभूति पर बल देकर आपने परम तत्व को यथार्थ और व्यवहार के पटल पर स्थापित किया ही नहीं, संप्रदाय-निरपेक्ष तौर पर हर इन्सान के दायरे में उसे घटित किया। 'कांहबे कूं सोभा नहीं, देख्या ही परवान', यही सच है। इसलिए जीवन की स्वाभाविक प्रक्रिया में उस परमतत्व को व्यवहार के स्तर पर साधते रहना अपने आप में आध्यात्मिव यात्रा है।

कबीर के समन्वय में जीवन की एकता

साम्प्रदाय की दीवारों के परे परमतत्व को घटित कर कबीर ने मानव जीवन के संम्प्रदायातीत और समन्वित रूप को प्रभावशाली तौर पर स्थापित किया है। आपने परमतत्व या ब्रह्म की ऊँचाई और विशालता पर ज़ोर देते हुए मानवीय जीवन की विशालता और गरिमा को ही उज़ागर किया ह। 'ना मैं गिरजा ना मैं मंदिर, ना काबे कैलास में। मौको कहाँ ढूंढे बंदे, मैं तो तेरे पास में'।। कहकर परमतत्व को हर इन्सान के निजी अनुभव के दायरे में लाया ही नहीं, 'ना हिंदू, ना मुसलमान' कहकर तत्कालीन समाज की संकीर्ण धाराओं

को दुत्कारा और उनसे खुद को अलग भी किया। खंडित मानसिकता से उबरकर खुद को ऊपर उठाने के लिए कबीर की पंक्ति प्रेरणादायक है -- 'कबीरा खड़ा बाजार में, लिए लुकाठी हाथ। जो घर जारे आपना, चले हमारे साथ'।। तात्पर्य है, 'इन्द्रधनुष' के विविध रंगों के समान विभिन्न समुदायों को सांम्मलित रूप से रहना होगा। कबीर की उक्ति 'जीवत क्यूँ न मराई' से प्रेरणा लेकर जीवनमुक्ति की भावना को आत्मसात करना समन्वयवाद में विद्यमान एकता की भावना को हस्तगत करने के लिए उपयुक्त है। 'बहता पानी निर्मला, बंदा गंदा होय। साधू जन रमता भला, दाग न लागे कोय।।' -- यही उनके समन्वयवाद की गतिकी थी। वेद के सम्यक, समग्र और संपूर्ण ज्ञान को व्यवहार के धरातल पर स्थापित कर मानवता का हित करने की साधना में कबीर वास्तव में सदैव अव्वल रहेंगे।

डॉ. एम. डी. थॉमस
संस्थापक निदेशक, इंस्टिट्यूट ऑफ़ हार्मनि एण्ड पीस स्टडीज़, नयी दिल्ली
प्रथम मंजिल, ए 128, सेक्टर 19, सेक्टर 19, द्वारका, नयी दिल्ली 110075

दूरभाष: 09810535378 (p), 08847925378 (p), 011-45575378 (o)
ईमेल : mdthomas53@gmail.com (p), ihps2014@gmail.com (o)
बेबसाइट: www.mdthomas.in (p), www.ihpsindia.org (o)

Twitter: https://twitter.com/mdthomas53
Facebook: https://www.facebook.com/mdthomas53
Academia.edu: https://independent.academia.edu/MDTHOMAS